Aayushi International Interdisciplinary Research Journal (AIIRJ)
Vol - VI Issue - III MARCH 2019 Peer Review e-Journal Impact Factor 5.707 ISSN 2349-638x

राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के सरसंघ चालक केशवराव बलिराम हेडगेवार का व्यक्तित्व एवं कृतित्व

नीरज मेहता
शोधार्थी, इतिहास

1 अप्रैल 1889, तिथि प्रथमा, विक्रम संवत् 1946 इस दिन को भारतीय इतिहास में 'गुड़ी पड़वा' के नाम से जाना जाता है। विजयदशमी के भव्य वर्प के पांच दिन बाद ही 'गुड़ी पड़वा' का पर्व समूचे देश में बड़ी धूमधाम से मनाया जाता है। इस दिन मर्यादा पुरूषोत्तम श्रीराम लंका–विजय के बाद अयोध्या लौटे थे और यही वह विजय दिवस था, जब उज्जैन के नरेश शालिवाहन ने म्लेच्छ शकों को पराजित कर विक्रमादित्य की उपाधि धारण करके 'विक्रम संवत्' का आरंभ किया। शौर्य और पराक्रम की स्मृति में मनाया जाने वाला यह त्योहार हिन्दुओं में दशहरा और दीवावाली के मध्य की कड़ी है। वैसे तो संपूर्ण भारत में इस अवसर पर धार्मिक वातावरण बना रहता है, लेकिन महाराष्ट्र में एक अलग ही उन्माद और हर्ष का वातावरण देखने को मिलता है। उन दिनों भारतवर्ष की सामाजिक दशा अत्यंत सोचनीय थी। अंग्रेजी दासता में भारतीय जनमानस को हर क्षेत्र में दुर्दशा से जूझना पड़ रहा था। दो दशक पूर्व ही भारत का पहला स्वतंत्रता संग्राम दहककर राख के नीचे अंगार बनकर सुलग रहा था। ब्रिटिश सरकार इससे बड़ी चिंतित थी और अब भार पर येन–केन प्रकारेण अपना शिकंजा मजबूत करने की हरसंभव कोशिश कर रही थी। उसका दमनचक्र अपने चरम पर था। जरा सा विरोध भी जेल और फांसी का कारण बन जाता था। न जाने कितने स्वतंत्रता प्रेमी अंडमान, रंगून, यरवदा और मांडले के कारागारों में बंद थे और उनसे भी अधिक बाहर सरकार से जूझ रहे थे।

ब्रिटिश सरकार के अत्याचार इतने बढ़ गए थे कि उसने धर्मांतरण की नीति को भी बढ़ावा देना शुरू कर दिया था। ईसाई मिशनरियां निर्धन दलित भारतीयों को बलात् धर्म– परिवर्तन के लिए विवश कर रही थीं। जमींदरों और महाजनों ने श्रमिक वर्ग की आंतों को अन्नविहीन करने की मुहिम इन मिशनरियों के इशारे पर छेड़ रखी थी और पेट भी भूख धर्म नहीं, रोटी मांगती है। मिशनरियां ऐसे विद्रूप हालात पैदा करतीं और फिर दयाभावना का पासा फेंकतीं। ब्रिटिश सरकार ने इस समय भारत का ईसाईकरण करने की ठान ली थी। ऐसे में बहुत से भारतीय विद्वान् चिंतित थे और धार्मिक आंदोलन के द्वारा वैदिकता का संरक्षण करने का प्रयास भी कर रहे थे।

बलिराम पंत का परिवार भी आर्य समाज के सिद्धांतों और दर्शनों का प्रबल समर्थक था। घोर कर्मकांडी होते हुए भी वे हिंदू धर्म व्याप्त मिथकों और अंधविश्वासों का पूर्ण विरोध करते थे चित्त, आत्मा और अपने आसपास के शुद्धीकरण को इस परिवार में विशेष श्रद्धा प्राप्त थी। उषाकाल से ही घर में धार्मिकता का भाव रहता था। केशव को विधिवत् शिक्षा के लिए विद्यालय में प्रवेश दिला दिया गया। आरंभ से ही प्रखर बुद्धि के केशव ने अपने गुरूजनों को हृदय जीत लिया। केशव प्रतिदिन सायं को

पाठशाला के मंदिर में जाकर वैदिक पूजा–पाठ करते और ऐसे महामंत्रों का जाप करते कि विद्वान् अध्यापक ही हतप्रभ रह जाते। उनके द्वारा मंत्रों का स्पष्ट उच्चारण और सस्वर लयबद्ध प्रस्फुटन अद्वितीय था। कुछ ही समय में केशव विद्यालय के सबसे योग्य छात्र के रूप में पहचाने जाने लगे थे। केवल पढ़ाई में ही नहीं, बल्कि आचार–व्यवहार में भी उन्होंने पाठशाला में एक नई परिपाटी आरंभ कर दी थी। वे छात्रों के ही नहीं, अध्यापकों के भी प्रिय बन गए थे। विद्यालय में एक अध्यापक ऐसे भी थे, जो छात्रों को देश की तत्कालीन स्थिति से बड़े ही मार्मिक ढंग से परिचित कराते थे। यह बड़े साहस का कार्य था क्योंकि ब्रिटिश सरकार इसे राजद्रोह की श्रेणी में गिनते थे। केशव बड़े मनोयोग से उस विषय को सुनत। उनका बालमन ब्रिटिश सरकार के प्रति विद्रोही होता जा रहा था। उनकी क्रूरता और अत्याचार का वर्णन केशव को भावुक कर देता और उनके हृदय में देशप्रेम हिलोरें लेने लगता।

यह वह समय था, जब भारत के अधिकांश क्षेत्रों में भयानक अकाल पड़ा था। उत्तर भारत में अकाल ने लाखों लोगों को बुरी तरह प्रभावित किया था। पंजाब, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश और बंगाल में अकाल ने भयानक विद्रपता दिखाई थी। ऐसे कठिन समय में ब्रिटिश वाइसराय एल्गिन द्वितीय ने अकाल से राहत की कोई योजना तैयान न करके बड़ी निर्लज्जता से कहा, ''भारत को शक्ति के दम पर जीता गया है और इसी दम पर इस पर शासन किया जाएगा।'' ये सब बातें केशव को व्यथित और क्रोधित करती थीं। उन्हें अधिक क्रोध तो इस बात पर आता था कि अंग्रजों के साथ–साथ बहुत सारे भारतीय भी गरीबों व मजदूरों का खून चूसने में पीछे नहीं थे। अपनी संस्कृति को भूल बैठे चंद अंग्रेज भक्त अपने ही भाई–बांधवों पर जुल्म ढहाते थे। कई राजा–महाराजा, मजींदार और ब्रिटिश सरकार में अनेक पदों पर कार्यरत ऐसे बहुत से लोग थे, जो ब्रिटिश संस्कृति का अनुसरण करने लगे थे। केशव ने इस विषय पर अधिक से अधिक जानकारी एकत्र की और उसी समय संकल्प लिया कि देश की आजादी में वे अपने जीवन को समर्पित कर देंगे।

इन्हीं दिनों भारत में ब्रिटेन की महारानी के सिंहासनारूढ़ होने की सातवीं वर्षगांठ का महोत्सव सरकार और उसके चमचे बड़ी धूमधाम से मना रहे थे। अंग्रेजों द्वारा अपनी महारानी का ऐसा सम्मानोत्सव समझ में आता था, लेकिन भारतीयों द्वारा ऐसा करना कहाँ तक उचित था। यह एक प्रकार से पराधीनता की स्वीकार्यता का चरम ही तो था। सन् 1905 में अंग्रेजी सरकार ने भारत में कूटनीतिक चाल चलते हुए हिंदू–मुस्लिम एकता पर करारा आधात किया। बंगाल में उस समय हिंदू–मुस्लिम एकता से राष्ट्रीय आंदोलन में बहतु तेजी पकड़ी हुई थी। क्रॉंतिकारी गतिविधियां जोरों पर थीं। इनमें सन् 1904 में वीर सावरकर द्वारा स्थापित 'अभिनव भारत' संस्था और 'अनुशीलन समिति' ने सरकार की नाम में दम कर रखा था। कलकत्ता क्रॉंति का गढ़ बन गया था। वाइसराय लॉर्ड कर्जन ने इस स्थिति पर काबू पाने के लिए एक विस्फोटक दांव खेला और बंगाल का विभाजन करने की घोषणा कर दी। यह एक प्रकार से हिन्दू–मुस्लिम एकता को तोड़ने का प्रयास था। कर्जन की इस विभाजनकारी नीति ने सारे भारत में भूचाल–सा ला दिया। बंगाल का विभाजन राष्ट्रवादियों को स्वीकार नहीं था। जगह–जगह विरोध–प्रदर्शन हुए, लेकिन कर्जन का निर्णय न बदला। भारतीय युवा रक्त खौल उठा। विभाजित बंगाल अस्तित्व में आ गया।

बंगाल–विभाजन ने देश भर में हड़कंप मचा दिया। नागपुर भी इससे अछूता नहीं रहा। स्वयं केशव को भी इससे पीड़ा हुई। बंगाल का विभाजन राष्ट्रीय आंदोलन के लिए बड़ी क्षति थी। हिंदू–मुस्लिम के बीच अविश्वास की खाई खोदने का ब्रिटिश प्रयास दूरगामी और विपरीत प्रभावों को पैदा करने वाला था। बंगाल की क्राँति इससे और भी अधिक मुखर हो उठी। केशव तो पहले से ही अंग्रेजों से चिढ़ हुए थे। इस समय वे 16 वर्षीय हृष्ट–पुष्ट युवा थे और दसवीं कक्षा में पढ़ते थे। उनका शारीरिक सौष्ठव ऐसा था कि उनके हमउम्र साथी उन्हें बिना अखाड़े का पहलवान कहते थे। केशव ने बहुत समय तक अपने अग्रज महादेव के साथ अखाड़े में व्यायाम किया था और संभवतः यह उसी व्यायाम का परिणाम था कि वे अपने साथियों में सबसे स्वस्थ दिखाई देते थे। केशव की एक और विशेषता यह थी कि वे नेतृत्व में बड़े निपुण थे। उनकी बातों का प्रभाव ऐसा था कि उनके साभी उनके आदेश को मानने में कोई संकोच या विरोध नहीं करते थे।

एक दिन विद्यालय में अंग्रेज अधिकारियों का निरीक्षण दल आने वाला था। विद्यालय के संचालक ने सभी छात्रों को आवश्यक दिशा–निर्देश दिए कि कैसे भी निरीक्षण दल को प्रसन्न और संतुष्ट रखना है। इसका सीधा सा तरीका चापलूसी बताया गया। इस पर केशव को बड़ा क्रोध आया। उन्होंने अपने साथियों को एकत्र किया और 'वंदेमातरम्' के जयघोष से निरीक्षक दल का स्वागत करने की राय दी। सभी साथी तैयार हो गए। अगले दिन अंग्रेज अधिकारी विद्यालय में आए तो संचालक व शिक्षकगण उनकी चापलूसी में जुट गए। फिर एक–एक कक्षा का निरीक्षण होने लगा। भ्रमण दल जब केशव की कक्षा में पहुँचा तो सभी विद्यार्थी एक स्वर में 'वंदेमातरम्' बोल उठे। यह देख स्कूल के संचालक आदि सन्न रह गए। अभी इस अप्रत्याशित उद्घोष की गंजू मंद भी न पडो थी कि अन्य कक्षाओं से भी यही उद्घोष गूंज उठा। अब तो संचालक का चेहरा पीला पड़ गया। वह भय से थर–थर कांप रहा था। अंग्रेज अधिरकारी ने कुपित नेत्रों से अध्यापकों और छात्रों को देखा और वहाँ से लौटकर अपनी गाड़ी में जा बैठा। संचालक हाथ जोड़कर क्षमादान माँग रहा था। सन् 1907 तक केशव 'सावरकारिया' रंग में पूरी तरह से रंग गए थे। उनकी वाणी में ओज और उग्रता आ गई थी। वे 18 वर्ष के हो गए थे। चाचा के साथ रहते हुए उनकी टोली देशभक्ति के कार्यों में संलग्न थी। पर्व–त्योहारों पर केशव की यह टोलो नगर भर में बड़े उत्साह से घूम–घूमकर भारत के प्राचीन इतिहास पर आधारित लघु नाटक इत्यादि करके लोगों को जागृत करती। मराठों की शूरवीरता और शिवाजी की गाथाएं सुनाकर लोगों को देशभक्ति के लिए प्रेरित किया जाता। केशव और उनकी मित्रमंडली तो ऐसे अवसरों पर जैसे 'मावली सेना' बन जाती थी। उनका उत्साह और कार्य देखने लायक होते थे। लोग इस युवा टोली को बड़ी कौतूहलता से देखते। केशव टोली के नेता थे और उनके नेतृत्व में अनुशासन का जो भाव था, वह मन को मोह लेने वाला था। उनकी उंगली और आँखा के संकेत पर टोली के सदस्य इस प्रकार हरकत में आते, जैसे किसी स्विच को दबाने से विद्युत लड़ि जलती–बुझती हैं। साधारण नागरिकों के लिए तो यह तमाशा बड़ा विचित्र था।

राष्ट्रीय आंदोलन में ऐसे तीक्ष्ण बुद्धि वाले युवकों की आवश्यकता थी। उन्होंने केशव की भूरि–भूरि प्रशंसा की और उन्हें शिक्षित आंदोलन के बारे में बारीकी से समझाया। केशव जान गए कि इस समय देशसेवा के लिए

उग्रता के साथ अनुशासन और शिक्षा की भी आवश्यकता है। उन्होंने आगे की शिक्षा जारी रखने का अपना इरादा पक्का किया और अपने चाचाजी को अपनी इच्छा से अवगत कराया। चाचाजी भी यही चाहते थे। शीघ्र ही केशव को यवतमाल भेज दिया गया। डॉ. मुंजे ने एक पत्र बापूजी अणे के नाम लिखकर उन्हें दिया और केशव के बारे में सब कुछ स्पष्ट कर दिया। केशव ने यवतमाल पहुँचकर बापूजी अणे से मुलाकात की और उन्हें डॉ. मुंजे का पत्र सौंप दिया। बापूजी अणे ने वह पत्र पढ़ा और बड़े ध्यान से अपने सामने खड़े युवा केशव को देखा। केशव के नेत्रों में झलकते दृढ़ विश्वास ने बापूजी अणे को भी प्रभावित किया। उन्होंने केशव की हर तरह से मदद करने का वचन देते हुए उन्हें अपने ही घर में रहने का स्थान भी दिया और उनका प्रवेश राष्ट्रीय विद्यालय यवतमाल में करा दिया।

इस घटनाओं का भारत में भी व्यापक प्रभाव पड़ा। युवा क्रॉंति और भी सक्रिय हो उठी और सरकारी दमनचक्र भी तेज हो गया। यवतमाल भी इससे अछूता नहीं रहा। अंग्रेज अधिकारी पूर्णरूपेण अनोति पर उतर आए और परांजपे का विद्यालय बंद कर दिया गया। केशव इस अन्याय पर बहुत क्षुब्ध और आक्रोशित हुए, लेकिन इस अंग्रेजी अन्याय के खिलाफ कहीं अपील भी तो नहीं थे। ऐसे कितने ही अन्यायी निर्णय अंग्रेज रोज–रोज कर रहे थें केशव को यवतमाल छोड़ना पड़ा।

धीरे–धीरे केशव बंगाल की क्रॉंति का हिस्सा बन गए। क्रॉंतिकारियों से उनके संबंध बनते गए। बंगाल में उन दिनों 'अनुशीलन समिति' की देश भर में पाँच सौ से ज्यादा शाखाएँ थीं। उग्र और हिंसक गतिविधियों की समर्थक यह समिति अपने सदस्यों को सैनिक प्रशिक्षण देतो थी। इसी समिति के सदस्य हेमचंद्र थे, जो बम–निर्माण विद्या सीखने रूस गए थे। केशव इस समिति के प्रारंभिक सदस्य बन गए। अपनी पढ़ाई पर भी उनका पूर्ण ध्यान था। उनका आवास श्यामसुन्दर चक्रवर्ती के साथ था, जिन्होंने उन्हें अपना भाई बताकर लोगों से परिचय कराया और यही कारण था कि केशव को भी लोग बंगाली समझने लगे थे। यह केशव की कुशाग्र बुद्धि थी, जो उन्होंने थोड़े ही समय में बांग्ला भाषा धाराप्रवाह बोलना–समझना सीख लिया था। कई लोग तो उन्हें केशव चक्रवर्ती के नाम से ही पुकारने लगे थे। कलकत्ता में देश भर से राष्ट्रीय आंदोलन के अग्रणी नेता आते थे और केशव लगभग सभी की सभाओं में व्यवस्थापक के रूप में मौदूज रहते थे। जब मौलवी लियाकत हुसैन कलकत्ता गए तो उन्होंने पहले केशव से ही मिलने की इच्छा प्रकट की। तिलक के परम मित्रों में एक मौलवी लियाकत ने जब केशव को देखा तो प्रसन्नता से झूम उठे। राष्ट्रीय आंदोलन में ऐसे युवाओं की आवश्यकता को लोकमान्य तिलक ने सिद्ध किया था। यही कारण था कि इस युवा आंदोलन से बहुत से शिक्षित युवा जुड़ गए थे। मौलवी साहब को भी केशव के विचार अच्छे लगे।

केशव ने बंगाल में सामाजिक कार्यों में भी अपना भरपूर योगदान दिया। उनके सामाजिक संस्थाओं के साथ मिलकर केशव ने जमीनी स्तर पर लोगों की समस्याएँ समझीं और उनका हरसंभव समाधान भी किया। सहभागिता के माध्यम से लोगों में आपसी सद्भाव का विकास किया। बंगाल की धरती पर जन्मे महापुरूषों, क्रॉंतिकारियों और समाजसेवी पुण्यात्माओं का वर्णन करके वे लोगों में राष्ट्रीय भावना जागृत करते। वे याद दिलाते कि चैतन्य महाप्रभु और रामकृष्ण जैसी निष्काम भक्ति–साधना को। वे राजा राममोहन राय के

मानवीय गुणों का बखान करते, जिन्होंने अपना सपूर्ण जीवन मानवता की सेवा में लगा दिया। उन्होंने यागी अरविंद घोष और संन्यासी योद्धा स्वामी विवेकानन्द की शिक्षाओं को अनुसरणीय बताया। सुरेन्द्रनाथ बनर्जी, केशवचन्द्र सेन और बिपिनचन्द्र पाल जैसे पराक्रमियों का आह्वान किया तो अपनी लेखनी से राष्ट्रीय भावना को दहकाने वाले कविगुरू रवींन्द्रनाथ टैटाोर की स्मृति को ताजा किया। केशव का अंदाजे–बयां इतना आकर्षक होता था कि लोग मंत्रमुग्ध होकर विषय में डूब जाते थे। केशव का बंगाल का यह प्रवास बहुत व्यस्त रहा। दिन–रात सामाजिक कार्यों में जुटे रहना, अनगिनत लोगों स मिलकर समिति के कार्यों को भी करना और फिर अपनी पढ़ाई करना यह बहुत आश्चर्य की बात है कि एक व्यक्ति इन सब व्यस्तताओं में सामंजस्य रखते हुए सभी कार्य कैसे कर लेता था। मेडिकल की परीक्षा उन्होंने प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण करके सबको चकित कर दिया। आर्थिक अभाव, समयाभाव के बावजूद केशव ने अपनी विलक्षणता सिद्ध कर दी।

संदर्भ–

1. शर्मा, रामविलास–भारत में अंग्रेजी राज और मार्क्सवाद, ज्योति प्रकाशन दिल्ली
2. देसाई ए.आर.–भारतीय राष्ट्रवाद की सामाजिक पृष्ठभूमि, नई दिल्ली
3. सिंह अयोध्या–भारत का मुक्ति संग्राम, नई दिल्ली
4. देशमुख नानाजी–राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ, प्रभात प्रकाशन नई दिल्ली
5. कुमार अधीश–पूज्य श्री गुरूजी और युवा, सुरुचि प्रकाशन केशवकुंज नई दिल्ली